ज्ञान तत्व अंक 147

(क) लेख, व्यवस्था परिवर्तन का शुभ संकल्प।

(ख) कार्यालयीन प्रश्नों के उत्तर ।

(ग) श्री धनश्याम दास गुप्त, शान्तिकुंज, शामली का प्रश्न और मेरा उत्तर ।

(घ) श्री कृष्ण कुमार सोमानी, 14 आर. कमानी मार्ग, बल्लाई बम्बई का प्रश्न और मेरा उत्तर ।

(च) श्री ईश्वर दयाल, नालंदा बिहार। का प्रश्न और मेरा उत्तर ।

(छ) श्री आर.एल. लवानिया, नोयडा, उत्तर प्रदेश। का प्रश्न और मेरा उत्तर।

(क) व्यवस्था परिवर्तन का शुभ संकल्प

पिछले कई वर्षो से ठाकुरदास जी बंग के मन में एक पीड़ा रही कि गांधी की मृत्यु के बाद भारत की राजनैतिक प्रणाली लगातार गांधी के सोच के विपरीत दिशा में चल रही है। राज्य के पास अधिकार दायित्व तथा हस्तक्षेप के अधिकार लगातार केन्द्रित होते जा रहे हैं। समाज व्यवस्था पर भी इस व्यवस्था के दुष्परिणाम दिखने लगे हैं। गांधीवादियों ने भी ऐसे दुष्परिणामों से बचाने के लिए समाज में कई प्रयास और प्रयोग किये किन्तु कोई विशेष सफलता न मिली न दिखी क्योंकि सत्ता के अकेन्द्रीयकरण की प्रत्यक्ष भूमिका को छोड़कर ही सारे प्रयत्न किये गये जिनका कोई अच्छा परिणाम न होना था न हुआ।

बंग जी के मन में लगातार यह पीड़ा बनी हुई थी और मार्ग भी दिखता था किन्तु न तो अकेले खड़ा होने की स्थिति बन रही थी न ही मित्रों की कोई टीम बन पा रही थी। उम्र और स्वास्थ्य भी निराश कर रहे थे। इसी काल खण्ड में अपने एक साथी बजरंग मुनि से चर्चा के बाद एक और प्रयत्न करने की संभावना बनी और बंग जी ने उन्तीस तीस दिसम्बर 2007 को दो दिनों के लिए सेवाग्राम आश्रम वर्धा में अपने कुछ अति विश्वसनीय साथियों , मित्रों की बैठक रखी जिसका नाम '' लोक स्वराज्य परिषद'' रखा। बैठक में करीब पचास लोग दो दिनों तक रहकर देश और समाज की राजनैतिक संवैधानिक स्थिति और उसके समाधान के मार्ग की चर्चा करते रहे। चर्चा का विषय ''दो सूत्री संविधान संशोधन के माध्यम से लोक नियुक्त तंत्र को लोक नियंत्रित तंत्र में बदलने की सीमा'' तक ही रखना पूर्व निश्चित था इसलिए बैठक इन दो प्रस्तावों से दूर नहीं जा सकी।

दो दिनों की चर्चा का उद्घाटन करते हुए परिषदके संयोजक श्री ठाकुरदास जी बंग ने वर्तमान सामाजिक समस्याओं की विस्तार से चर्चा की। महिलाओं की समस्याएँ गरीब अमीर के बीच की बढ़ती खाई, श्रम की दुर्दशा, ग्रामीण रोजगारों का पतन, किसान आत्महत्या आदि समस्याओं को आधार बनाते हुए उन्होंने सिद्ध किया कि ऐसी समस्याओं का समाधान तब तक संभव नहीं जब तक गांधी जी द्वारा बताये अकेन्द्रित

शासन व्यवस्था के मार्ग पर चलना शुरू नहीं किया जाता। इसके लिए प्रारम्भिक तौर पर दो सूत्री संविधान संशोधन बहुत प्रभावकारी सिद्ध होगा जिसका पहला सूत्र है निर्वाचित जनप्रतिनिधि वापसी के लिए संविधान में व्यवस्था और दूसरा सूत्र है परिवार,गॉव,जिला जैसी स्थानीय इकाईयों के अधिकारों की सूची संविधान में स्थापित करके उन्हें संसद और विधान सभाओं के समान अधिकार सम्पन्न करना बंग जी ने इस दो सूत्री संविधान संशोधन के परिणामों को चमत्कारिक प्रभाव वाला बताते हुए कहा कि समाज की समस्याओं के समाधान के साथ–साथ व्यवस्था पर समाज के नियंत्रण का संघर्ष भी जारी रहना चाहिए था। दुर्भाग्य से यह संघर्ष प्रारम्भ ही नही हुआ और राजनीतिक व्यवस्था ने वोट का अधिकार छोड़कर अन्य सारे अधिकार अपने पास इकट्ठे कर लिए। अब ऐसी केन्द्रित व्यवस्था को अहिंसक संघर्ष के माध्यम से लोक स्वराज्य हेतु प्रेरित या मजबूर करने के प्रयत्नों की शुरूआत करने के लिए आज की यह लोक स्वराज्य परिषद् आयोजित है।

बंग जी के सम्बोधन के बाद पहला सत्र शुरू हुआ जिसकी अध्यक्षता आचार्य पंकज जी ने की। प्रथम वक्ता बजरंग मुनि ने स्पष्ट किया कि बंग जी का आशय वर्तमान सामाजिक सुधार के प्रयत्नों को छोड़कर या रोककर संघर्ष करने से नहीं है , बल्कि सामाजिक सुधारों के साथ–साथ एक संगठन तैयार करने से है जो राजनैतिक व्यवस्था परिवर्तन की दिशा में भी संघर्ष कर सके। जब तक लोकतंत्र का तंत्र लोक नियंत्रित नहीं होगा तब तक लोकतंत्र का वास्तविक उद्देश्य पूरा नहीं हो सकता। हमारी संवैधानिक व्यवस्था लोकतंत्र को लोक नियुक्त तक तो ले जाती है परन्तु लोक नियंत्रित नहीं कर पाती। यह कभी भूल से हुई या जानबूझ कर यह मेरा विषय नहीं है। मैं तो यही कहना चाहता हूॅ कि भूल हुई। अब तक इस भूल को सूधारनें के लिए आशिक प्रयत्न जेपी आंदोलन में असफल होने के बाद हमारी हिम्मत और टूट गयी। अब बंग जी ने ऐसे आन्दोलन की शुरूआत पर विचार शुरू किया है यह बात बहुत हिम्मत की है। मैं उनके प्रयत्नों के पूरे समर्थन तथा अपनी पूरी सहभागिता का वचन देता हूं।

भारत जन आन्दोलन प्रमुख ब्रम्हा देव जी शर्मा ने भी अपनी विस्तृत विवेचना में स्वीकार किया कि प्राकृतिक न्याय के अनुसार समाज राज्य को अधिकार देता है। आज की स्थिति यह है कि राज्य ने स्वयं को दाता घोषित कर दिया है और उनको दाता मानकर हम उनसे अधिकार मांगने का आंदोलन चलाते हैं जो प्राकृतिक न्याय सिद्धान्त के बिल्कुल विपरीत है। हम ऐसी अपनी कमजोरी दूर करके स्वयं को मालिक की भूमिका में स्थापित करें यह आवश्यक है।

दूसरे सत्र की अध्यक्षता ब्रम्हादेव जी शर्मा ने की जिसमें इसी आवश्यकता का समर्थन करते हुए श्री कमल टावरी, श्रीमति मनोरमा शर्मा, चुन्नी भाई, लोकेन्द्र भाई झांसी, विशिष्ट जी शर्मा जयपुर सहित अनेक वक्ताओं ने अपने विचार व्यक्त किये।

तीसरे सत्र की अध्यक्षता करते हुए चुन्नी भाई ने सतर्क रहने की सलाह दी और बताया कि यह आन्दोलन तो सर्वोदय की जान है। गांधी विनोबा जय प्रकाश ने लगातार ऐसे आंदोलन की आवश्यकता बताई है। किन्तु ऐसे आन्दोलन में हमें बहुत

सतर्कता और सावधानी बरतनी होगी कि आंदोलन गलत हाथों मे न चला जावे। आचार्य पंकज जी ने स्पष्ट किया कि जय प्रकाश आदोलन को जिस प्रकार राजनेताओं ने हाई जैक कर लिया उसके प्रति सतर्कता से मैं पूरी तरह सहमत हूँ। इसलिए इस आन्दोलन में व्यक्तियों को ही सदस्यता दी जावे। किसी भी स्थिति में किसी दल या संगठन को सदस्यता न दी जावे।

तीस दिसम्बर की बैठक के प्रथम सत्र विशिष्ट जी शर्मा की अध्यक्षता में आयोजित प्रारम्भिक विचार विमर्श के बाद मतदान हुआ और सर्व सम्मति से आन्दोलन की आवश्यकता पर सहमति बनी।

इस सत्र में बंग जी ने व्यवस्था परिवर्तन अभियान नाम से आंदोलन शुरू करने की घोषणा की। सभी उपस्थित सहयोगियों न करतल ध्वनि से घोषणा का स्वागत किया। सब लोगों ने बंग जी से नेतृत्व का भरपूर निवेदन किया जिसे उन्होंने स्वास्थ्य संबंधी कारणों से अस्वीकार कर दिया। उन्होंने स्पष्ट किया कि वे आंदोलन के संस्थापक तक ही रहना चाहते हैं। आगे संघर्ष की टीम बने और उनकी सलाह या कोई और भी आवश्यकता होगी तो वे पीछे नहीं है किन्तु कार्यक्रम की अध्यक्षता या संचालन उनके लिए संभव नहीं। अविनाश भाई और जगदीश शाहजी सूरत ने भी बंग जी पर अधिक भार न देने की सलाह दी। बहुत चर्चा के बाद निम्न सहमति बनी।

(1) यह आन्दोलन पूरी तरह अहिंसक होगा
(2) आन्दोलन में व्यक्तियों को शामिल किया जायेगा , संगठनों को नहीं।
(3) आन्दोलन का नाम व्यवस्था परिवर्तन अभियान होगा।
(4) आन्दोलन के लिए दो सूत्र निश्चित हैं, किन्तु यदि अगस्त का सम्मेलन आंदोलन की सफलता के उद्देश्य से आवश्यक समझे तो एक तीसरा सूत्र भी जोड़ सकता है।

आन्दोलन का अन्तिम सत्र योजना के लिए रखा गया था। इस सत्र की अध्यक्षता हरियाणा प्रदेश सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष महावीर त्यागी जी ने की। त्यागी जी ने अपनी सूझ–बुझ ओर गंभारता का उपयोग करते हुए इस सत्र को प्रभावशाली बनाने में बहुत सहायता की। इस सत्र में निम्न कार्यक्रम बने।

(1)इस आंदोलन को गति प्रदान करने के लिए नौ अगस्त के आस–पास दिल्ली में एक राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया जाये। सम्मेलन के आयोजक के रूप में आमंत्रण आठ लोगों के नाम से भेजे जावें (1)ठाकुरदास जी बंग (2)ब्रम्हादेव जी शर्मा (3)स्वामी अग्निवेष (4) कुलदीप जी नैयर(5)प्रभाष जोशी जी(6)कमल टावरी जी(7) मनोरमा शर्मा जी (8)बजरंग मुनि जी

(1)ब्रम्हादेव जी शर्मा इस सत्र के पूर्व ही अपनी स्वीकृति देकर आवश्यक कार्य से चले गये थे। स्वामी अग्निवेष जी, कुलदीप जी नैयर तथा प्रभाष जोशी जी नहीं थे। इसलिए

सम्मेलन के सचिव जी से यह कहा गया कि वे अनुपस्थित आयोजकों से चर्चा कर लें ।

(2)व्यवस्था परिवर्तन अभियान के आगामी सम्मेलन के लिए महासचिव के रूप में आचार्य पंकज जी को मनोनीत किया गया।

(3)इस सम्मेलन में आवश्यकतानुसार तीसरे मुददे को जोड़ने पर सुझाव के लिए श्री महावीर त्यागी जी का अध्यक्षता में एक तेरह संसदीय समिति कार्यक्रम समापन के बाद बैठी जिसने सर्व सम्मति से तीन मुद्दों की सिफारिश की (क)कानून व्यवस्था में सुधार (ख)कृषि नीति में आमूल परिवर्तन(ग)आर्थिक असमानता, श्रम शोषण की रोकथाम के प्रयत्न ।

(4)सम्मेलन में बिना किसी प्रकार के भेदभाव के उन सबको शामिल करने का प्रयत्न किया जाये जो दो सूत्री आंदोलन और अहिंसक मार्ग के प्रति सक्रियता हेतु सहमत हों ।

(5)आंदोलन का वर्तमान कार्यालय –एफ.एफ. –47 लक्ष्मीनगर दिल्ली को रखा जाए। वर्तमान में वह स्थान बजरंग मुनि जी का निवास है । संपर्क हेतु फोन –09968374100 हैं ।

समाप्ति के बाद घनश्याम जी गर्ग ने कोष संबंधी चर्चा की। बंग जी ने कोष में अपने आशीर्वाद स्वरूप एक हजार दान दिया। वहां उपस्थित अन्य साथियों ने भी कुछ दान दिया जिसे आगे बढ़ाने की प्रतिबद्धता दुहराई गयी।

प्रसिद्ध गांधीवादी कार्यकर्ता तथा हिन्दू स्वराज्य विचार मंच के संयोजक ओम प्रकाश दूबे ने आज के आन्दोलन के संस्थापक के रूप में ठाकुरदास जी बंग की पहल को एक ऐतिहासिक घटना के रूप में देखते हुए उनके प्रति आये हुए मित्रों की ओर से आभार व्यक्त किया। दो दिनों तक अविनाश भाई ने व्यवस्था और संचालन का दुहरा दायित्व निभाया उसके प्रति भी सबने आभार व्यक्त किया। अन्त में बंग जी ने आये हुए साथियों का आभार व्यक्त करते हुए इच्छा व्यक्त की कि वे इस अभियान या आन्दोलन को सिर्फ प्रस्ताव के रूप में न देखकर परिवर्तित व्यवस्था के आधार के रूप में स्थापित होते हुए देखना चाहते है तथा आह्वान करते हैं कि उनके सभी शुभचिंतक अन्य क्षेत्रों में कार्य करने में साथ–साथ गांधी ,विनोबा , जयप्रकाश द्वारा बताये गये लोक स्वराज्य के इस मार्ग पर भी बढ़ने का प्रयास करेंगे।

(ख) कार्यालयीन प्रश्नों के उत्तर

प्रश्न – हिन्दुस्तान सत्रह दिसम्बर के पृष्ठ आठ और नौ को पढ़ा। पृष्ठ आठ पर संपादकीय में चिन्ता व्यक्त की गई है कि ग्लोबल वार्मिग इस समय की सबसे बड़ी समस्या है। यदि इस समस्या से ठीक से नहीं निपटा गया तो सम्पूर्ण मानव जाति के समक्ष संकट उत्पन्न हो जायेंगा। संपादकीय में ग्लोबल वार्मिग का भयावह चित्र भी खीचा गया है । दूसरे कालम में कैलाश चन्द्र पपने जी का एक बडा लेख क्षपा है जिसमे उन्होने वृद्ध लोगों के भरण –पोषण के लिये बने नवीनतम कानून की प्रशंसा

की है। पपने जी ने वृद्ध लोगों की दयनीय स्थिति का भी विस्तृत वर्णन किया है। अखबार के इसी पृष्ठ पर एक अन्य लेख कल्पना शर्मा जी का छपा है। इस लेख में कन्या भ्रुण हत्या को गंभीर समस्या बताया गया है।

मैं अनुभव करता हूँ कि तीनों की समस्याओं के प्रति समाज भी चिन्तित है और सरकार भी। सरकार भी इनके समाधान का प्रयत्न कर रही है और समाज भी । किन्तु आप इस विषय में चुप है। आप विस्तृत विवेचना द्वारा अपने विचार प्रकट करें।

उत्तर–हमें चिन्तन के क्रम में कई मुद्दों पर विचार करना पड़ता है।

(1) समस्या से प्रभावित वर्ग की वर्तमान सामाजिक स्थिति।
(2) समाधान की प्राथमिकताओं में समस्या की प्राथमिकता का स्थान।
(3) समाधान में कानूनी हस्तक्षेप के लाभ –हानि का आकलन।
(4) आदर्श और व्यवहार के बीच संतुलन।

मेरे विचार में वर्तमान समय में वर्ग दो ही प्रकार से मानना, चाहिए । (1) गरीब, ग्रमीण, श्रमजीवी, उत्पादक (2)अमीर शहरी, बुद्धिजीवी, उपभोक्ता। उपरोक्त तीन प्रकार की जो समस्याएं आपने लिखी है उसमें से किसी भी समस्या से पहला वर्ग कही प्रत्यक्ष प्रभावित नहीं है। ग्लोबल वार्मिंग का पहले वर्ग पर दूसरे वर्ग की अपेक्षा कम प्रभाव पड़ेगा। यदि पड़ेगा भी तो बहुत बाद में। कन्या भ्रूण हत्या या वृद्ध तिरस्कार जैसी समस्याएं भी शयद ही पहले वर्ग में हो। सच्चाई यह है कि तीनों समस्याओं का प्रभाव अमीर बुद्धिजीवी उपभोक्ता वर्ग पर ही पड़ेगा। यदि आबादी के अनुपात में देखें तो पहले वर्ग में करीब सत्तर प्रतिशत और दूसरे वर्ग में तीस प्रतिशत के ही आस–पास होंगे। 70 प्रतिशत लोग अभावग्रस्त और 30 प्रतिशत सुविधा भोगी है। प्रश्न उठता है कि किस वर्ग की समस्याओं के समाधान की कितनी आवश्यकता है? मेरे विचार में अक्षम वर्ग को प्राथमिकता मिलनी चाहिए।

धरती का वातावरण गरम हो रहा है। यह एक भूमण्डलीय समस्या है। भूमण्डलीय स्तर पर वैज्ञानिक और राष्ट्रीय सरकारें इस पर विचार करें और समाधान खोजे। किन्तु सामान्य नागरिक के बीच इतना प्रचार करने और भय पैदा करने की क्या आवश्यकता है? क्या यह समस्या अन्य समस्याओं की अपेखा अधिक प्राथमिक हो गयी है। ग्लोबल वार्मिंग के दो अर्थ हो सकते है। (1)भूमण्डलीय पर्यावरण ताप वृद्धि
(2) भूमण्डलीय मानव स्वभाव ताप वृद्धि। पर्यावरण ताप वृद्धि की अपेक्षा मानव स्वभाव ताप वृद्धि ज्यादा विनाशकारी है। सम्पूर्ण विश्व में पिछले पचास वर्षो के मानव स्वभाव में सामान्यतया पांच प्रतिशत ताप वृद्धि तो अवश्य मानना चाहिए अर्थात् सम्पूर्ण विश्व में कानून व्यवस्था और न्याय व्यवस्था पर विश्वास लगातार घट रहा है तथा शारीरिक बल प्रयोग या प्रत्यक्ष न्याय पर विश्वास बढ़ रहा है। विचारणीय प्रश्न यह है कि पर्यावरण ताप वृद्धि और मानव स्वभाव ताप वृद्धि में से किसी तात्कालिक खतरा अधिक है तथा किसके समाधान में हमारी भूमिका अधिक प्रभावकारी हो सकती है। स्पष्ट ही है कि पर्यावरण ताप वृद्धि की तुलना में मानव स्वभाव का खतरा परिवार व्यवस्था में भी दिखलाई दे सकता है और स्थानीय से लेकर विश्व स्तर तक भी। मानव स्वभाव ताप

वृद्धि में हमारी प्रशासनिक व्यवस्था का सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है जबकि पर्यावरण ताप वृद्धि में प्रशासनिक भूमिका न होकर सिर्फ राजनैतिक भूमिका ही होती है फिर भी दुनिया भर के प्रशासनिक स्तर के लोग पर्यावरण ताप वृद्धि के लिए नहीं मचाते। मेरी इच्छा है कि अभी बाली में जैसा पर्यावरण ताप वृद्धि के समाधान का विश्व स्तरीय सम्मेलन हुआ वैसा सम्मेलन मानव स्वभाव में हो रहे हानिकारक बदलाव पर भी होना चाहिए।

परिवार में वृद्ध माता–पिता के प्रति वयस्क बच्चों की उदासीनता भी एक समस्या तो है किन्तु वह प्रशासन की प्राथमिकता के क्रम में कहीं नहीं आती। यह प्रशासनिक समस्या न होकर पूरी तरह या तो सामाजिक समस्या है या पारिवारिक समस्या। यही हाल भ्रूण हत्या का भी है। वह भी प्रशासनिक समस्या न होकर सामाजिक, पारिवारिक तक सीमित है। अनुभव बताता है कि सामाजिक या पारिवारिक समस्याओं का प्रशासनिक समाधान न हुआ है न होगा। ऐसी समस्याओं को प्रशासन सुलझाता कम है और उलझाता ज्यादा है। मकान किराया कानून के लाभ हानि का हम आकलन करें। दहेज निवारण कानूनों ने भी कितने बेगुनाहों को जेलों से सड़ा दिया यह प्रशासन भी महसूस करने लगा है। वृद्ध जनों की उदासीनता का कारण संयक्त परिवार प्रणाली को तोड़कर सहकारी परिवार प्रणाली बनाने के प्रयत्नों में देखने की जरूरत है। संयुक्त परिवार में सम्पूर्ण सम्पत्ति पर सबका समान अधिकार होता तो सम्पत्ति के लिए न तो इतना दांवपेंच होता न वृद्ध लोग सम्पत्ति विहीन होते। यदि बच्चे उदासीन होते तो वृद्ध अपने हिस्से की सम्पत्ति कभी भी लेकर अलग हो सकते थे। वैसे भी न तो यह जन समस्या विकराल बन गयी है न ही कन्या भ्रूण हत्या की। इन दोनों समस्याओं में प्रशासन को अभी बिल्कुल दूरी बनाकर रखनी चाहिए। विशेषकर वैसी हालत में जब प्रशासन अपने दायित्व की समस्याएं ही सुलझाने में सफल होता न दिख रहा हो।

ये तीनों समस्याएं है और सुलझनी भी चाहिए। किन्तु हमारी प्राथमिकताओं के क्रम में ये हीं नहीं ठहरती। हमारा सारा फोकस इस बात पर पहले होना चाहिए कि हमारे प्रयत्नों का गरीब ग्रामीण श्रमजीवी उत्पादक वर्ग पर क्या प्रभाव पड़ता है। यदि इस वर्ग पर कोई प्रत्यक्ष प्रभाव न पड़ता हो तो हमें ऐसी सामाजिक छेड़छाड़ से बचना चाहिए। यदि कोई किसी व्यक्ति के मूल अधिकारों Fundamental Right पर आक्रमण करे तब तो न्याय और सुरक्षा के अन्तर्गत उसमें प्रशासन को हस्तक्षेप करना ही है। किन्तु यदि मूल अधिकार पर आक्रमण न होकर सामाजिक अधिकारों पर अतिक्रमण होता हो तो प्रशासन को दुरी बनाकर ही रखनी चाहिए। कन्या भ्रूण हत्या या बुजुर्ग भरण–पोषण आदि पूरी तरह सामाजिक अधिकारों तक सीमित हैं।

किसी प्रतिष्ठित दैनिक के एक ही पृष्ठ में ये तीन मुद्दे उठाये गये हैं। इससे सिद्ध होता है कि इन विषयों पर समाज भी चिन्तित है और सरकार भी। मेरा ऐसा अनुभव है कि ऐसी चिन्ता करने वालों में या तो सम्पन्नों का टकराव अधिक दिखेगा या निठल्लों की कसतर। किसी भी चर्चित समस्या पर कुछ भी लिखकर पृष्ठ भर देने की आदत आमतौर पर दिखती हैं। यदि समाज में लड़की के माता–पिता द्वारा दहेज देने की प्रथा चलती हो तब इनके लेखों में दहेज के लिए बेचारे माता–पिता की तकलीफों

को आधार बनाकर कन्या विक्रय का रोना रोया जाता है और जब लड़कियां बिकने लगें और लड़की के माता–पिता दहेज लेने लगें तब भी इनकी नजर में तो कन्या के साथ अत्याचार होता ही है। ये पेशेवर लोग महिला अत्याचार को ऐसा बढ़ा–चढ़ाकर तिल का ताड़ बनाते हैं कि इस समस्या के वास्तविक पहलू छूते ही रह जाते हैं। मैं कई जगह पढ़ता हूॅ कि एक ही विद्वान एक लेख में तो युवा शक्ति के प्रोत्साहन के तर्क प्रस्तुत करता है तो दूसरे लेख में वृद्धों के पास में युवाओं को कटघरे में भी खड़ा करता रहता है। मेरे विचार में ये लोग समाज में युवा वृद्ध या महिला पुरूष के बीच वर्ग निर्माण, वर्ग विद्वेष के लिए ज्यादा चिंतिति रहते हैं और समाधान के लिए कम। मैं चाहता हूॅ कि हम Over Loaded प्रशासन व्यवस्था का कुछ दायित्व कम करने की दिशा में जनमत तैयार करना शुरू करें अन्यथा चालाक राजनेता आपकी मांग को आधार बनाकर सारे दायित्व समेटते रहेंगे और न्याय और सुरक्षा कमजोर होती जायेगी ।

प्रशासन और राजनीति से जुड़े लोग भी ऐसा भय समाज में बनाकर रखना चाहते हैं। कोई ग्लोबल वार्मिग की बात करता है तो कोई पानी के लिए विश्व युद्ध की । वैज्ञानिकों या उच्च प्रशासनिक स्तर पर इन मुद्दों पर चर्चा तो होनी चाहिए किन्तु ऐसी चर्चाएं जब सामान्य जन जीवन में फैलाई जाती हैं तब किसी षड़यंत्र की गंध आती है। वस्तु स्थिति यह है कि जब प्रशासनिक राजनैतिक व्यवस्था अपने दायित्व पूरे नहीं कर पाती और निकट भविष्य में उसे सफलता दूर–दूर तक दिखती भी नहीं तब वह ऐसे अनावश्यक भय पैदा करना शुरू कर देती है। कन्या भ्रूण हत्या, ग्लोबल वार्मिग या पानी के लिए युद्ध जैसे भय इसीलिए खड़े किया जा रहे हैं कि प्रशासन या राजनैतिक व्यवस्था वास्तविक समस्याओं के समाधान में तो सफल होती नहीं दिखती बदले में समाज में अनावश्यक भय पैदा करने में सक्रिय रहती है। और हमारे प्रतिष्ठित सामाजिक विचारक प्रशासन से सम्मान या पारितोषिक की लालच में ऐसे मुद्दों पर जनमत को भ्रमित करते रहते हैं।

प्रश्नोत्तर

(ग) श्री धनश्याम दास गुप्त, शान्तिकुंज, शामली

प्रश्न – रविवार अट्ठारह नवम्बर सात को जन्तर–मन्तर पर आयोजित व्यवस्था परिवर्तन अभियान के अन्तर्गत संविधान मंथन सभा में सुनने और बोलने का अवसर मिला। बजरंग मुनि जी का भाषण बहुत सार्थक रहा। संविधान के मुद्दे पर उन्होंने गम्भीर विचार दिये। किन्तु व्यवस्था परिवर्तन का पक्ष अछूता ही रहा। मुझे ऐसा लगता है कि व्यवस्था परिवर्तन के संबंध में गंभीरता से सोचने की आवश्यकता है। व्यवस्था जड़ जोती है और उसको बनाने वाला और चलाने वाला चैतन्य अपने तरीके से व्यवस्था की परिभाषाएं बदलता रहता है। यही कारण है कि न्यायालय में भी ऐसी परिभाषाएं उलटती रहती हैं। चुनाव आयोग भी समय–समय पर ऐसा ही करता रहता है।

मैं भी आयु के अस्सी वर्षो में से इकसठ वर्ष की संघ आयु का स्वयं सेवक हूं। मैं जानना चाहता हूं कि क्या अब तक किसी सामूहिक चिन्तन से संशोधित व्यवस्था का प्रारूप बन पाया है। यदि हां तो उसकी प्रतियां इस सभा में बंटनी चाहिए थीं। यदि कोई प्रारूप नहीं बना है तो वह प्रारूप पहले बन जाना चाहिए।

आशा है कि आप कुछ प्रकाश डालेंगे।

उत्तर– कोई भी व्यवस्था किसी संविधान के अंतर्गत चलती है। समाज की भूमिका में जीवन्त स्तर के दो समूह होते हैं। (1)संचालक(2)संचालित। यदि संविधान संचालक द्वारा बनाया जाता है या संचालक के नियंत्रण में होता है तो उसे लोकतंत्र कहते हैं। भारत में लोकतंत्र होते हुए भी इस तरह विकृत है कि संचालक घोषित रूप से तो संविधान द्वारा नियंत्रित है किन्तु वास्तव में वह संविधान को ही नियंत्रित करता है क्योंकि संविधान संशोधन का अन्तिम अध्किार उसी के पास है। इस तरह भारत में अभी यह नहीं कहा जा सकता कि संविधान सर्व शक्तिमान है या संचालक।इतना अवश्य पता है कि संचालित की भारतीय लोकतंत्र में कोई भूमिका नहीं है। वह तो सिर्फ बोट देने तक ही सीमित है।

हम अभी सामाजिक व्यवस्था पर विचार–मंथन तक ही सीमित हैं। हम चार खण्ड़ों में प्रयास कर रहे हैं।

(1) सामाजिक विषयों पर विचार मंथन।
(2) संवैधानिक विषयों पर विचार मंथन।
(3) राजनीति पर समाज के अंकुश हेतु दो सूत्रीय संविधान संशोधन आन्दोलन।
(4) श्रम और बुद्धि के बीच श्रम को मजबूत करने का तीन सूत्रीय आन्दोलन।

ये चारों प्रयत्न एक साथ चल रहे हैं यद्यपि चारों के संगन भिन्न–भिन्न हैं।

सम्पूर्ण व्यवस्था परिवर्तन अभियान के तीन चरण हैं। पहले चरण के रूप में उपरोक्त चार प्रयत्न चल रहे हैं। इस चरण के पूरा होने के बाद दूसरा चरण शुरू होगा जो संविधान के अन्य संशोधनों का प्रयत्न करेगा। दूसरा चरण पूरा होने के बाद सामाजिक व्यवस्था परिवर्तन का कार्य प्रारम्भ किया जायेगा। इस बात का पूरा–पूरा ध्यान रखा जायेगा कि पहले चरण के साथ ही दूसरा चरण शुरू न हो जावे और तीसरा चरण तो बिल्कुल ही शुरू नहीं होना चाहिए। राजनीति से जुड़े लोग विशेंषकर संघ परिवार से जुड़े लोग ऐसा प्रयत्न कर रहे हैं और करेंगे भी कि तीसरा चरण पहले

शुरू हो, किन्तु हमें बिल्कुल सावधान रहना है कि पहले चरण के प्रथम और द्वितीय खण्ड विचार मंथन तक ही सीमित रहें। अनेक धार्मिक संस्थाएं भी किंकर्तव्यविमुढ़ होकर तीसरे चरण पर पहले सक्रिय होने का प्रयत्न करती रहती हैं। वे समझती ही नहीं कि दूषित संवैधानिक राजनैतिक व्यवस्था चरित्र निर्माण में सर्वाधिक बाधक हैं सामाजिक संस्थाओं का हाल तो इन राजनैतिक धार्मिक संस्थाओं से भी अधिक चिन्ताजनक हैं। इन सामाजिक संस्थाओं में से अनेक तो विदेशी धन लेकर विदेशी मार्गदर्शन में ही इस दिशा में सक्रिय रहती है।

ऐसी विकट परिस्थिति में हमें यह काम करना है। हमारे समक्ष व्यवस्था परिवर्तन को भी स्पष्ट रूप से परिभाषित करना है, अपनी प्राथमिकताएं भी तय करनी है और सक्रिय भी होना है। आपके साथ जुड़ने से हमें और अधिक सुविधा होगी ऐसी आशा है।

(घ) श्री कृष्ण कुमार सोमानी, 14 आर. कमानी मार्ग, बल्लाई बम्बई – 400001

ज्ञान तत्व अंक एक सौ चालीस में संविधान संशोधन संबंधी सुझाव मांगे गये हैं। इस संबंध में मैंने भी बहुत परिश्रम करके कुछ निष्कर्ष निकाले है।

मैंने अपने सम्पूर्ण निष्कर्ष में आर्य संस्कृति तथा प्राचीन परम्पराओं को आदर्श समझा है। हमारी प्राचीन संस्कृति दुनिया की अन्य संस्कृतियों से भी प्राचीन तो है ही , इसकी यह भी विशेषता है कि यह अब तक सफलता पूर्वक चल रही है। गुलामी के लम्बे काल के बाद भी सफलतापूर्वक बढ़ते जाना इसके गुणों का स्पष्ट प्रमाण है। इस संस्कृति की एक खास विशेषता है कि यह नयी परिस्थितियों में संशोधन मान्य करती है ,परिवार गांव तक की ईकाइयों को निर्णय की अधिकतम स्वतंत्रता देती है, सुरक्षा और न्याय में निचली ईकाइयों की सहभागिता के बाद भी इसका अन्तिम दायित्व राज्य का मानती है हमारी प्राचीन राजनैतिक व्यवस्था समाज व्यवस्था में हस्तक्षेप नहीं करती । विवाह पद्धति, स्त्री पुरूष संबंध आदि में अन्य किसी भी सामाजिक व्यवस्था की अपेक्षा भारतीय व्यवस्था आदर्श और व्यवहार के बीच अधिक सामंजस्य के मार्ग पर चलती है जबकि अन्य व्यवस्थाएं इसके ठीक विपरीत किसी धर्मग्रन्थों को या महापुरूषों के कथन को अन्तिम मानकर संशोधन के मार्ग को रोक देती हैं। यही कारण कि हमारी व्यवस्था में नास्तिक को भी जितने अधिकार प्राप्त है उतने कहीं और नहीं। स़्त्री पुरूष संबंधों में नियोग तक की व्यवस्था आदर्श और व्यवहार के बीच अद्भुत संतुलन के रूप में माना जा सकता है।

आपने जो तेइस विषय चुने हैं उसका क्रम ठीक नहीं है। चुनाव पद्धति और फांसी को जोड़ दिया गया है। क्रमांक दो में संविधान संधोधन क्यों लिखा है पुनः क्रमांक सोलह में दूबारा संविधान संशोधन विषय आ गया है। शिक्षा जैसे महत्वपूर्ण विषय को कहीं रखा ही नहीं गया। इन सब विसंगतियों पर विचार करियेगा। इसी तरह आप व्यवस्था और संविधान को भी गड्ड–मड्ड कर देते है। मेरे विचार में यदि

ज्यादा कसरत न करके हम चुनाव प्रणाली और पंचायती राज्य प्रणाली तक भी अपने को सीतिम कर लें तो बहुत कुछ ठीक हो सकता है।
उत्तर– आपने बत्तीस पृष्ठों का एक समाज व्यवस्था का विस्तृत विवरण हाथ से लिखकर भेजा और साथ में उक्त विचार आधारित पुस्तक की दो प्रतियां भेजी। ये दोनों ही दस्तावेज हमारे बहुत काम आयेंगे समय–समय पर जब भी इन विषयों पर मंथन होगा तब हम इनका उपयोग करेंगे।

आपने जो कुछ लिखा है उसमें सामाजिक व्यवस्था के मुद्दें अधिक हैं और संवैधानिक राजनैतिक व्यवस्था के कम। हम दोनों को अलग लेकर चल रहे हैं। सामाजिक व्यवस्था पर विचार मंथन का दायित्व ज्ञान यज्ञ के माध्यम से होता है और राजनैतिक संवैधानिक व्यवस्था पर विचार मंथन संविधान मंथन सभा के माध्यम से। चुनाव पद्धति में प्रतिनिधि वापसी का विचार शामिल करना तथा परिवार गॉव जिले की समाज व्यवस्था से राजनैतिक हस्तक्षेप को कम से कम करने का आन्दोलन लोक स्वराज्य मंच के जिम्मे है। इन सब का सांगठनिक ढांचा भी अलग–अलग है और कार्य पद्धति में भी। संविधान मंथन में हम संविधान परिवर्तन की दिशा में नहीं सोच रहे। हम वर्तमान संविधान में व्यापक संशोधन तक सीमित हैं। इसलिए हमारा आधार तो वर्तमान संविधान ही है। उसी संविधान के उसी मूल ढांचे के अन्तर्गत रहकर हम मंथन को बढ़ा रहे हैं।

हम लोगों ने जो तेइस भाग किये हैं वे सभी स्वतंत्र विषय हैं। इन पर अलग–अलग विस्तृत चर्चा होगी। प्रस्तावित सम्पूर्ण संविधान संशोधनों की सूची ज्ञानतत्व अंक सत्तान्नवे में गई थी। उसके पूर्व भी वर्ष 2002 में वह प्रस्ताावित संविधान गया था। उपलब्ध न हो तो लिखियेगा । भेज देंगे। वैसे मंथन सभा के अन्य सदस्यों की सूची अप्रैल तक बन जायेगी तब तो एक बार प्रस्तावित संशोधनों का पूरा प्रारूप जायेगा ही। क्रमांक दो और सोलह बिल्कुल भिन्न विषय हैं। क्रमांक दो तो सिर्फ कारणों तक सीमित है किन्तु सोलह संविधान संशोधन के लिए प्रस्तावित प्रकिया के संबंध में है। जो संविधान होगा उसमें भविष्य में संशोधन कौन और कैसे कर सकता है उस संबंध में विचार सोलवें दिन होगा। इसी तरह फांसी की सजा और चुनाव प्रणाली एक साथ जुड़े विषय नहीं है। ये विषय छोटे होने से एक ही दिन में दो सत्र करके पृथक–पृथक होंगे। कुछ विषय ऐसे भी हैं जो एक ही विषय दो दिनों में पूरे होंगे। उसका विवरण बाद में जायेगा। शिक्षा व्यवस्था को हम राज्य व्यवस्था से अलग रखकर उसे समाज व्यवस्था में शामिल करने के पक्षधर हैं। इसलिए उसे शामिल नहीं किया गया है। क्रमांक छः पर जब चर्चा होगी तब उस पर सोच लेंगे। वैसे ज्ञानतत्व की चर्चा क्रम में मार्च माह में हम क्रमांक छः तक पहुंच जायेंगे। अब तक उद्देश्यिका संविधान संशोधन क्यों समता और स्वतंत्रता आदि विषय पूरी तरह संविधान मंथन से जुड़े हैं। अन्य विचार मिले –जुले हैं।

आपने दो मुद्दों पर ही चर्चा की बात की। यह सही है। हमारा पूरा आंदोलन दो ही मुद्दों पर केन्द्रित है। हम कसरत तो दो ही मुद्दों पर करेंगे किन्तु अन्य मुद्दों की जानकारी रखनी चाहिए। कल्पना करिये कि दो मुद्दों पर हम सफल हो गये तो सब कुछ ठीक हो जायेगा? मेंरे विचार से दो मुद्दों पर संघर्ष जीतने का अर्थ मात्र यही होगा कि नई व्यवस्था के बीच का अवरोध हटेगा न कि वह स्वयं में नई व्यवस्था होगी। नई संवैधानिक व्यवस्था के लिए तो हमें फिर से प्रयत्न करने होंगे। उन प्रयत्नों की जानकारी करना आवश्यक मानकर हम यह प्रयत्न कर रहे हैं।

आपने प्राचीन भारतीय संस्कृति के आधार पर जो लिखा है उसमें कहीं असहमति नहीं है किन्तु आपने अपने लेखन के क्रम में पृष्ठ पच्चीस पर लिखा है कि सन् पचपन में बिजली के रेट दस पैसे था जो अब बढ़कर पांच रूपया अर्थात् पचास गुना हो गया। इतनी मूल्य वृद्धि का प्रभाव बेरोजगारी पर क्यों नहीं पड़ा। मैंने लिखा है कि बिजल के रेट पचास वर्षो में कभी नहीं बढ़े क्योंकि मूल्य वृद्धि के अकलन का फार्मूला इस तरह बना हुआ है'' उस वस्तु का उस वर्ष का मूल्य ग आज तक की चक्रवृद्धि मुद्रा स्फीति – वर्तमान मूल्य = मूल्य वृद्धि या मूल्य ह्रास। सन् पचपन की बिजली दस पैसे x मुद्रास्फीति की चक्रवृद्धि पचास गुनी –आज का मूल्य पांच रूपये = 0 आप बताइये कि मूल्य कहां बढ़ा। दूसरी ओर श्रम की मांग घटने के बाद भी श्रम का औसत मूल्य लगभग दो गुना हो गया। यही कारण है कि कृत्रिम उर्जा श्रम के मुकाबले सस्ती है और उसकी मांग लगातर बढ़कर श्रम की विकास दर को रोक रही है। क्या कारण है कि पूरे भारत की औसत विकास दर नौ प्रतिशत होते हुए भी श्रम की दर एक से उपर नहीं बढ़ पा रही है। इसका मुख्य कारण मुद्रास्फीति को न समझने के कारण ही है जैसा अर्थ आपने भी निकाला है।

मेरी इच्छा है कि आप संविधान मंथन पर भी कुछ और लिखें विशेषकर मेरे लेखों में उठे संवैधानिक मुद्दों पर तो अवश्य लिखें। संविधान मंथन सभा के लिए कुछ उपयुक्त नाम प्रस्तावित भी करें।

(च) श्री ईश्वर दयाल, नालंदा बिहार।

इसे वर्तमान भारतीय समाज की विडम्बना ही कहना चाहिए कि हम अपने सहचिन्तक/सहयात्री से सार्वजनिक विषयों पर संवाद करने के पूर्व उसकी जातीय पृष्ठभूमि के संबंध में आश्वस्त हो लेना चाहते है। कदाचित् यह हमारे दोहरे '' बगुला चरित्र '' का परिचायक है, जिसके पंखों की सफेदी पेट में पचती मछलियों से आती हैं

स्थिति कितनी जटिल और भयावह हो चुकी है उसका अदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि आपके जैसा प्रखर और गम्भीर चेता भी विचारों को गुण –दोष के आधार पर संग्रह 'त्याग करने के स्थान पर प्रस्तोता की पृष्ठभूमि की पड़ताल करने चल पड़ता है। ज्ञान तत्व 123 पृष्ठ 26 आपके मन में संशय हो सकता है किन्तु मेरे मन में न तो आपके सदस्यता के बारे में कोई संशय है न अपने विचारों के बारे में।

मूझे पता है कि लाभ प्राप्त अवर्ण धुर्तो के तमामा हथकण्डों के बाद भी अभी मात्र 16..... .....18 प्रतिशत आरक्षित स्थान ही भरे जा सके हैं। शेष पर तो आज भी धूर्त सवर्णो की ही कब्जा है। आपके सुझाव के अनुसार यदि लाभ प्राप्त अवर्ण आरक्षण का लाभ लेना बन्द कर रहे है तो आरक्षित स्थानों में से मात्र 5.....7 प्रतिशत तक ही (वह मात्र तृतीय व चतुर्थ वर्गीय पदों तक ही)अवर्णो की पहुंच रह जायेगी और इस तरह धुर्त सवर्णो को लाभ के अतिरिक्त पद उपलब्ध होंगे। निश्चय ही आप अपने सुझाव को ऐसा बिद्रुप नहीं देखना चाहेंगे।

आरक्षण और दूसरे प्रायोजित लाभ रामविलास पासवान की बजाय धुरहूं भुइया तक पहुंचे यह आपका भी अभिप्रेत है, मेरा भी। परन्तु यह आवाज स्वयं घुरहू भूइया के भीतर से आनी चाहिए, जैसे किसी समय श्री कांशीराम ने जगजीवन राम के नेतृत्व को चुनौती दी थी या आज रामविलास पासवान मायावती से नेतृत्व छीनने के इच्छुक हैं। मैं आश्वस्त हूॅ ऐसी मांग आज न कल उठेगी। बाधक बन रहे हैं हम आप। जब ऐसी मांग किसी रमेश डागर, किसी बजरंगमुनि, किसी ईश्वरदयाल द्वारा उपस्थित की जाती है तो युगों–युगों से छला गया बेचारा घुरहू भूंइया संशयत्रस्त हो जाता है कि यह अतिरिक्त सहानुभूति कहीं उसे और उसकी सन्तानों को अन्नत काल तक छलते ही चले जाने की किसी अबूझ वृहत् योजना रूपी आइसवर्ग का प्रत्यक्ष दिखने वाला छोटा अंश तो नहीं और वह इस तरह के किसी प्रस्ताव का समर्थन करने या उसमें प्रतिभागिता करने से इनकार कर देता है। इसीलिए आज की तारीख में घुरहू भूंइया से रामविलास जी या मायावती जी के विरूद्ध इस तरह की मांग उठवाने के लिए शायद उसके लिए किसी तरह की लालच या घूस की व्यवस्था करनी पड़े। (मूझे कोई आश्यर्च नहीं होगा यदि कोई शातिर सवर्ण किसी घुरहू भुंइया को अपने प्रभाव में लाकर इस तरह की मांग उठवा दे)। 'मंडल के जमाने में विहार के एक चर्चित अवर्ण आई0ए0एस0 अधिकारी का एक आलख समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ था जिसका लुब्बो –– लुआब यह था कि दलित वंचितों का शोषण दलन सदा मध्य या 'मण्डल' वर्गीय जातियों ने किया है, इसलिए दलितों का भला सवर्ण, विशेषतः ब्रम्हण वर्ग के साथ एकजूट बने रहने में है। यद्यपि बाद में वह अधिकारी तत्संबंधी मेरे प्रश्नों का सामना करने का साहस नहीं जुटा पाये। (बहुत बाद में मुझे एक भद्र सवर्ण ने ही बतलाया कि उक्त आलेख के पीछे किसी सवर्ण कन्या –रत्न का योगदान था)।

इस समस्या का एक पक्ष यह भी है कि घुरहू भुंइया के साथ मानवोचित व्यवहार और न्याय की गुहार लगाने वाले या तो कुछ भद्र सवर्ण थें या फिर डॉ0 अम्बेडकर, कांशीराम सदृश्य अवर्ण , जो वंचित वर्ग के तथा कथित क्रीमीलेयर थे, स्वयं घुरहू भूंइया नहीं। अतः आज का घुरहू भुंइया, रामविलास या मायावती को अपनी लड़ाई के हथियार के रूप में देखता है और जब पहले के पक्ष में दूसरे के पद त्याग करने का प्रस्ताव सम्पन्न वर्ग की ओर से उठता है तो घुरहू भूंइया को लगता है कि सम्पन्न वर्ग उसके हाथ से लड़ाई का वह हथियार छीन लेना चाहता है।

डगमगपुर जैसे प्रकल्पों की चर्चा करते हुए आशान्वित थे कि भविष्य में ये पॉकेट्स अपने संसाधनों और तकनीकों के बल पर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों से टक्कर ले

सकेंगें और अन्ततः उन्हें हरा सकेंगे। इसी तर्ज पर भले ही आरक्षण का लाभ वंचित अवर्णो के 5 प्रतिशत तक ही पहुंचा है, परन्तु उन्हीं 5 प्रतिशत में से जगह–जगह शहरों से लेकर गांवों तक सम्पन्न अवर्णो के ऐसे पॉकेट्स बन गये हैं, बन रहें है जो भले ही वंचित अवर्णो को और कुछ न दे पा रहे हों, शायद उनकी हकमारी ही कर रहे हों, पर उन पॉकेट्स की उपस्थिति मात्र सवर्णो की सामंतवादी सोच और व्यवहार पर अंकुश का काम कर रही हैं।अपने स्वार्थ वश ही सही उन्हें चुनौती दे रही है। सामन्तवादी सवर्णो को यह सबसे ज्यादा अखर रहा है। इस कारण सम्पन्न और विपन्न का प्रश्न उठाकर अशक्त अवर्णो को सशक्त अवर्णो से अलग कर देने के लिए यह 'सुगर कोटेड जहर' धुर्त सवर्णो द्वारा ही वितरित किया जा रहा है। शायद आपने भी लक्ष्य किया हो। इन दिनों हरियाणा से लेकर सूदूर दक्षिण आन्ध्र और तमिलनाडू तक सवर्ण सामन्तवादी हमलों के शिकार विपन्न घुरहू भूंइया नहीं, अपेक्षाकृत सम्पन्न कामेश भूंइया समरेश जाटव या किशन महार हो रहे हैं। अभी हाल में इसी सोच और मानसिकता न सम्पन्न अवर्ण महिलाओं पर सार्वजनिक/सामूहिक बलात्कार किया और जांच दल के साथ गई श्री मति वृन्दाकरात से उस गॉव की सवर्ण महिलाओं ने कहा कि बलात्कार की शिकार वे महिलाएं बहुत घमण्डी थीं और उनके साथ यह व्यवहार (बलात्कार) उचित ही हुआ। क्या उन महिलाओं को भी सवर्ण धुर्तो की श्रेणी में डालकर छुट्टी पा ली जाए? क्या सवर्ण महिलाओं का वह कथन किसी गहरे रोग का संकेतक नहीं है। जहां भंवरी बाई प्रकरण में उच्च न्यायालय के जज तक सवर्ण बलात्कारियों को यह कहकर 'बरी कर देते हों कि आरोपियों के लिए पीड़िता अस्पृश्य है इसलिए वे उसके साथ बलात्कार नहीं कर सकते वहॉ सामान्य ग्रामीण परिवेश में आपके भले सवर्ण कहां ढूंढ़े मिलेंगे, मुझे नहीं पता।

जब भी आरक्षण की चर्चा होती है योग्यता क्षमता का प्रश्न भी जरूर उठाया जाता है। हाल में किये गये सर्वेक्षण के आंकड़े स्पष्टतया दिखलातें हैं कि आरक्षित पदों पर नियुक्त कर्मचारियों –अधिकारियों की योग्यता कार्य निष्पादन क्षमता का स्तर अनारक्षित पदों पर नियुक्त अधिकारियों –कर्मचारियों से किसी तरह कम नहीं रही। दूसरी ओर सवर्णो की योग्यता क्षमता का 'रिकार्ड' बहुत निराशाजनक रहा है। सिकन्दर कालीन आम्भी से लेकर मुगलकालीन मानसिंह से होते हुए ठेठ अंग्रेजों तक इन सबल–सक्षम सवर्णो की सारी योग्यता विधर्मी विदेशी आक्रांताओं को आमंत्रित कर उनका चरण–बन्दन करने और कन्या रत्न की भी भेंट देकर येन–केन–प्रकारेण अपनी सुख सुविधा बचाये रखने में ही प्रदर्शित होती रही है। गुलामों, खोजों और हिजड़ों तक से पराजित हो जाने वाले इन योग्य क्षमतावानों का खामियाजा इस देश को एक हजार वर्ष की गुलामी के रूप में चुकाना पड़ा हैं। वर्तमान काल के प्रमुख घोटालेबाजों की सूची पर नजर दोड़ाएं तो गौतम गोस्वामी से लेकर उपेन्द्र ब्रम्हाचारी तक सर्वत्र सवर्ण ही सवर्ण नजर आयेंगे। अवर्ण तो दाल में नमक बराबर ही दिखेंगे। सम्प्रति चारों ओर जो राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक क्षेत्रों में पतन का नजारा देखने को मिल रहा है उसके मूल में 'सवर्ण योग्यता' ही है , कारण सर्वत्र महत्वपूर्ण पदों पर वे ही विराजमान होकर अपनी योग्यता का प्रदर्शन कर रहे है।

एक बात और मैंने लक्ष्य किया है कि 'आरक्षण' का बड़ा से बड़ा विरोधी भी आरक्षण के पूर्ण उन्मूलन का समर्थन नहीं करता। वह एक ओर तो परम्परा के नाम पर तथा कथित मनुवादी (मैं नहीं मानता कि मूल मनुस्मृतियों में भेदभाव मूलक संदर्भ विद्यमान थे वे कालान्तर में धूर्तो द्वारा प्रक्षिप्त है)आरक्षण का लाभ लेता रहना चाहता ही है। उस विन्दु पर चर्चा से भी कतराता है। आर्थिक आधार पर भी आरक्षण की वकालत करने लगता है, ताकि उसके लाभ को भी अपने पक्ष में मोड़ा जा सके। सामाजिक –शैक्षणिक आधार पर की गयी वर्तमान आरक्षण व्यवस्था में भी किसी तरह सवर्ण धूर्त लाभ उठा ले रहे हैं उसके कुछ उदाहरण मैंने आपको पिछले पत्र में दिये थें। जिन्हें प्रकाशित करने का साहस आप नहीं जुटा पाए। आर्थिक आधार पर आरक्षण का क्या हर्ष होने वाला है। इसकी एक दो उदाहरण 'स्थाली पुलाक न्याय' से पिछली बी.पी.एल. सूची में एक ऐसे सवर्ण धूर्त और उनके परिजनों के नाम थे जो सरकारी नौकरी से सेवा निवृत्त होकर 7–8 हजार रूपये प्रतिमाह पेंशन भी ल रहे है 7–8 एकड़ भूमि के स्वामी भी थे। उन्हें और उनके परिजनों को गरीबों के लिए परिचालित योजना का लाभ तीन – साढ़े तीन लाख रूपयों के रूप में मिला भी। वर्तमान बीपीएल सूची में एक सचिव स्तर पदाधिकारी एवं उनके परिजनों का नाम तो अखबारों में चर्चा का विषय बना हुआ है। जबकि उसी गॉव के भूमिहीन वंचित अवर्णो को पूछने वाला कोई भी नहीं। धूर्त सवर्ण अपने देशव्यापी नेटवर्क द्वारा यह सब चमत्कार करने में सक्षम है जबकि वंचित अवर्ण नहीं।

यदि सच्चाई को अभिव्यक्ति देना क्रोध या अतिरिक्त सहानुभूति है। तो बेशक आप मेरे अभिव्यक्ति को ऐसा नाम दे सकते हैं। आपको संशयग्रस्त होने का भी उतना ही अधिकार है। वस्तुतः वहम की दवातों हकीम लुकमान के पास भी नहीं थी।

मैं हर तरह से आरक्षण को समाप्त करने का समर्थन कर सकता हूॅ। यदि तथाकथित मनुवादी आरक्षण के सभी रूपों को समाज के हर पहलू से पहले समाप्त कर दिया जाए। और हर नागरिक के लिए बिना भेदभाव के अवसर के समानता (शिक्षण संस्थानों सहित) सुनिश्चित की जाए। पद और पैसे के प्रभाव को समाप्त किया जाए। वंचित अवर्ण भूमि से जुड़े होने का बिना किसी आरक्षण के भी हजारों वर्षो से अपने अस्तित्व को बचाए हुए हैं। आगे भी बचाये रहेंगे, किन्तु उन परजीवी सवर्णो का क्या होगा जो हजारों वर्षो से आरक्षण का लाभ लेते रहने के कारण भूमि से रस ग्रहण करने वाली अपनी जड़ों को ही खो बैठे हैं पूर्वाग्रह मुक्त खुले चिन्तन की आवश्यकता है। मैं इस बिन्दु पर किसी भी राजनेता, समाजशास्त्री,धर्मशास्त्री से खुले संवाद को तत्पर हूॅ। आजकल मायावती जी और रामविलास पासवान जी सवर्णो को आर्थिक आधार पर आरक्षण का प्रस्ताव करने में एक दूसरे से होड़ ले रहे हैं। सचमुच इतिहास अपने को दोहराता है आरक्षण के नाम पर 65 वर्षो तक सवर्ण नेता अवर्ण बोट बटोरते और सियासत करते रहे हैं। अब अवर्ण नेता आरक्षण के नाम पर सवर्ण बोट झटकने के चक्कर में हैं। जब सबको आरक्षण ही देना है तो क्यों न सारे आरक्षणों (शैक्षणिक सहित)समानता सबकों उपलब्ध करायी जाए।

आर्थिक आधार पर आरक्षण की वकालत करने वाले एक सच्चाई से जानबूझकर मुंह चुराते हैं भूरहू भुइया और रामलगन पाण्डेय की गरीबी एक ही नहीं है। घुरहू भुंइया की गरीबी के कारण श्रम शोषण है जबकि रामलगन पाण्डेय की गरीबी के कारण श्रम को हेय दृष्टि से देखना है। गलत पूर्वाग्रहों के कारण सवर्णो की आधी आबादी स्त्रियां घर की चाहरदीवारी में बन्द रहकर स्वास्थ्य और क्षमता वैसे ही खो बैठती हैं। इन निठल्ले लोगों को आरक्षण का लाभ धुरहूँ भुंइया के श्रम शोषण पर देना कितना न्यायोचित है, विचार करेंगे।

उत्तर – ईश्वर दयाल जी के पत्र से मुझे लगा कि आरक्षण की यह चर्चा विचार मंथन से निकलकर वैचारिक टकराव या शास्त्रार्थ की दिशा में बढ़ने लगी है जो मेरे लिए उचित नहीं। इसलिए मैं स्वयं को मंथन के उस आरोप प्रत्यारोप से अलग करता हूँ। इसलिए मैं इसके वैचारिक पक्ष तक ही सीमित विचार प्रस्तुत कर रहा हूँ।

मैं प्रारम्भ से ही आरक्षण का विरोधी रहा हूँ। हजारों वर्षो से चले आ रहे सामाजिक आरक्षण का भी और स्वतंत्रता के बाद के संवैधानिक आरक्षण का भी। मेरी मान्यता यह है कि बुद्धिजीवियों ने सम्पूर्ण व्यवस्था पर एकाधिकार करके श्रम शोषण के नये –नये तरीके खोज लिये। इन्होंने वर्तमान शिक्षा प्रणाली को विकास का आधार सिद्ध करके उस पर अधिकाधिक संसाधन लगाने की आवश्यकता सिद्ध कर दी भले ही श्रम के बजट में कटौती ही क्यों न करनी पड़े। व्यवस्था में बुद्धिजीवियों का ही एकाधिकार है और श्रमजीवियों का ही एक धड़ा मांग करता है उन्हीं का दूसरा धड़ा मांगों पर विचार करता है और उन्हीं का तीसरा धड़ा मांग स्वीकार भी कर लेता है। इन्हीं में से कुछ लोग गरीब घोषित श्रमजीवी के रूप में खड़े दिखते हैं तो दूसरा धड़ा साहित्यकार विचारक बनकर ऐसे सिद्धान्त तय करता है और तीसरा धड़ा प्रशासनिक अधिकारी राजनेता या न्यायाधीश बनकर उन्हें राहत प्रदान कर देता है ये लोग इसी योजना के अन्तर्गत श्रमिक उत्पादन उपभोक्ता वस्तुओं पर टैक्स भी लगाते हैं और यही लोग शिक्षा बजट बढ़ाने की भी मांग जारी रखते है। अभी –अभी एक रिपोर्ट आई है जिसके अनुसार पूरी दुनिया में अशिक्षित बाल श्रमिकों की संख्या भारत में सर्वाधिक है जो एक करोड़ सत्रह लाख है। इन अशिक्षित बालकों का निन्यान्नवे प्रतिशत ऐसे परिवारों से है जो शारीरिक श्रमजीवी भी है और गरीबी रेखा के नीचे भी। भारत के वर्तमान बुद्धिजीवी इन बच्चों को शिक्षित करने के लिए शिक्षा बजट बढ़ाने की भी बात करते हैं और बाल श्रम पर रोक लगाने की भी। मेरे विचार में यह सब इनका ढोंग है । जब तक इन परिवारों को शारीरिक श्रम मूल्य बढ़ाकर इनकी गरीबी रेखा को समाप्त नहीं किया जाता तब तक इनमें अशिक्षा का औसत घट नहीं सकता। क्योंकि न्यूनतम रोटी कपड़ा के बाद शिक्षा का नम्बर आता है। आप न्यूनतम रोटी कपड़ा के पूर्व शिक्षा और शिक्षा माध्यम से रोटी कपड़ा की विपरीत लाइन पर प्रयास कर रहे हैं जो संभव नहीं। शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है और शिक्षा पर बजट बढ़वाकर गरीबी रेखा के उपर वालों को लाभ पहुंचाने के लिए न्यूनतम रोटी कपड़ा वंचित परिवारों पर शिक्षा

रूपी दया की आवश्यकता सिद्ध करना भी आवश्यक है किन्तु मेरे और आप जैसे व्यक्ति के लिए यह कैसे उचित है यह विचार मंथन करना आवश्यक है।

हजारों वर्ष पूर्व की समाज व्यवस्था में बुद्धिजीवी सवर्णो ने स्वयं को उच्च स्थापित करने कुछ जातियों को ही श्रमिक घोषित कर दिया जो पिछड़ते चले गये । इन पिछड़ी जातियों के कुछ बुद्धिजीवियों ने इस स्थापित अन्यायपूर्ण जाति व्यवस्था के विरूद्ध संघर्ष करके आरक्षण के आधार पर उस एकाधिकार में अपनी घुसपैठ भी कर ली। यह टकराव अब भी जारी है। ये दोनों ही एक मुद्दे पर एकमत हैं कि बौद्धिक श्रम का मूल्य तीव्र गति से बढ़ता रहे भले ही शारीरिक श्रम कितना भी क्यों न पिछड़े। ये दोनों ही इस बात पर एकमत हैं कि शिक्षा का बजट बढ़ता रहे भले ही कृषि उत्पादन खाद्य तेल या साईकिल पर भी क्यों न टैक्स लगाना पड़े। ये लोग अपना वेतन भत्ता सुख –सुविधा के लिए संघषरत् हैं और बेचारे श्रमजीवी धुरहू भुइयां को कह रहे हैं कि शारीरिक श्रम को छोड़ों। शिक्षित बनो, टकराने की हिम्मत करो और धुरहू भूइयां से निकलकर धुरहु राम बन जाओं। जब तक श्रम के साथ चिपके रहोगें तब तक इसी तरह भूखे मर जाओगे। सात पीढ़ी तक कभी भरपेट भोजन भी नसीब नहीं होगा। इस आह्वान का असर पड़ता है और पांच सात प्रतिशत धुरहू भुइयां राम बनकर विधायक सांसद कर्मचारी अधिकारी बनने में सफल हो जाते हैं बाकी सब भाग्य भरोसे वहीं पड़े रहते है।

मैं चाहता हूं कि शारीरिक श्रम और बौद्धिक श्रम के बीच बहस हो और शारीरीक श्रम को मजबूत तर्क दिये जाये। आप पूरी बहस को बुद्धिजीवी सवर्णो और बुद्धिजीवी अवर्णो के बीच केन्द्रित करना चाहते है जबकि मैं इस बहस को शारीरिक श्रममूल्य और बौद्धिक श्रम मूल्य के बीच बढ़ती खाई पर केन्द्रित करना चाहता हूं। आप किसी पांडे के एकाधिकार से धुरहू राम को शामिल करने का प्रयत्न कर रहे है मैं धुरहू भुइंया की पूरी श्रमिक जाति को ही उपर उठाने के प्रयत्न में लगा हूं भले ही उसका नाम बदले न बदले। मैं भारत में स्थापित सामाजिक आरक्षण व्यवस्था का सम्पूर्ण रूप से विरोधी हूं किन्तु मैं उसके स्थान पर उससे प्राप्त लाभ कम करके अशिक्षित श्रमजीवियों के लाभ बढ़ाने को उसका समाधान मानता हूं। किन्तु यदि आप इस पचड़े में न पड़कर लाभ प्राप्त कर रहे सवर्णो में कुछ अवर्णो को शामिल करने तक सीमित हो तब भी मैं आपका समर्थन ही करूंगा, विरोध नहीं क्योंकि लूट का माल कुछ सीमित जातियों तक सीमित न रहकर कुछ अधिक परिवारों में छीना–झपटी की दिशा में बढ़े तो कोई बुरी बात नहीं है।

अन्त में मैं स्पष्ट कर दूं कि मैं न जातीय आरक्षण का पक्षधर हूं न आर्थिक आधार पर आरक्षण के। मैं तो चाहता हूं कि श्रम मूल्य इतने अधिक बढ़ जावे कि शारीरिक श्रम आकर्षक हो जावे और यदि इसके लिए अन्य बुद्धिजीवियों की सुविधा वृद्धि को दो चार वर्षो के लिए रोकना पड़े, शिक्षा बजट को कम करना पड़े, कृत्रिम ऊर्जा की मूल्य वृद्धि करना पड़े या और कोई भी कदम उठाना पड़े तो उठाया जावे। विषय पर विचार मंथन बढ़ाने में मुझे खुशी होगी।

(छ) **श्री आर.एल. लवानिया, नोयडा, उत्तर प्रदेश।**

मैं आपके विचारों में एक स्वाभाविक निष्कर्ष पाता हूं। ज्ञान तत्व में आपने नरेन्द्र मोदी और बुद्धदेव भट्टाचार्य की कार्यशैली को आधार बनाकर लोकतंत्र और तानाशाही की गंभीर तुलना की। लेख बहुत गंभीर हो गया है। साधारण पाठक तो समझा ही नहीं सकेगा। फिर भी लेख बहुत उपयोगी है।

लेख पढ़ने से यह स्पष्ट नहीं होता कि आपका अन्तिम निष्कर्ष क्या है ? तानाशाही को आपने अव्यवस्था का समाधान बताया दूसरी ओर तानाशाही की अपेक्षा लोकतंत्र को ही अच्छा भी बता दिया। एक दो अन्य मुद्दों पर भी आपके विचार कुछ ज्यादा गंभीर हो जाते हैं । यदि निष्कर्ष अधिक स्पष्ट हो तो अच्छा होगा।

उत्तर– मुझे सामाजिक या स्थानीय विषयों पर भी चिन्तन करना है और गंभीर आर्थिक, राजनैतिक या अर्न्तराष्ट्रीय विषयों पर भी। मैं जातिवाद, विवाह पद्धति आदि विषयों पर सोचता हूँ तो सामान्य लोग आसानी से समझ जाते हैं किन्तु जब मैं लोकतंत्र या समाजवाद जैसे विषयों पर लिखता हूं तब सामान्य लोगों को कठिनाई होती है। इसी तरह कई मुद्दो पर मैं निष्कर्ष तक पहुंच पाता हूं और कई तक स्वयं नहीं पहुंच पाता। भविष्य में निष्कर्ष निकल सकता है। कठिनाई आपको भी है और मेरी भी इसलिए इसी तरह दोनों को कठिनाई में ही राह निकालनी होगी। मैंने अब तक अर्न्तराष्ट्रीय स्तर के तीन विचारों को चुनौती दी है।

(1) मेरे विचार में पूरी दुनिया में लोकतांत्रिक शासन प्रणाली तानाशाही का विकल्प नहीं बन सकती। मैंने बुद्धदेव, नरेन्द्रमोदी लेख में लिखा है कि लोकतांत्रिक शासन प्रणाली में हमें अव्यवस्था और तानाशाही के बीच ही झूलते रहना होगा। इसलिए मैं भी इन दोनों के बीच ही झूलता रहा। इसका एकमात्र समाधान है लोक स्वराज्य प्रणाली अर्थात् जीवन पद्धति में लोकतंत्र। स्वाभाविक है कि विषय बहुत कठिन है किन्तु कई बार चर्चा के बाद समझ में जायेगा।

(2) मेरे विचार में कृत्रिम ऊर्जा श्रम बहुल देशों में श्रम प्रतिस्पर्धी होती हैं। सम्पूर्ण अर्थनीति में भारत जैसे श्रम बहुल देशों की सभी आर्थिक समस्याओं का एकमात्र कारण है कृत्रिम ऊर्जा के प्रति सम्पन्नों और बुद्धिजीवियों का मोह। जब मैं लिखता हूँ कि भारत की सभी आर्थिक समस्याओं का समाधान कृत्रिम ऊर्जा मूल्य वृद्धि ही है तो यह निष्कर्ष पूंजीपतियों और बुद्धिजीवियों के लिए आश्चर्य जनक लगने लगता है।

(3) मेरे विचार में शिक्षा यदि अशिक्षितों श्रमजीवियों को मिले और उसका व्यय दूसरे शिक्षित बुद्धिजीवी उठावें तो यह उचित भी है और न्यायसंगत भी क्योंकि शिक्षा उनको शक्ति प्रदान करती है। किन्तु यदि शिक्षा पर होने वाले खर्च का भार तो श्रमजीवियों अशिक्षितों को भी उठाना पड़े और शिक्षा का लाभ उन्हें न मिले तो यह अन्याय भी होगा और षडयंत्र भी। वर्तमान समय में शिक्षा पर होने वाले व्यय का बहुत थोड़ा भाग प्राथमिक शिक्षा पर खर्च होता

है बाकी सारा खर्च उच्च शिक्षा पर है और शिक्षा के खर्च की पूर्ति के लिए अशिक्षितों श्रमजीवियों को अपने उत्पादन उपभोग की वस्तुओं पर कर देने पड़ते हैं। यह षड़यंत्र है। मेरी यह बात भी आसानी से नहीं समझ में आती है।

स्वाभाविक है कि ये तीनों ही नतीजे निकालने वाला मैं पूरी दुनिया में अकेला खड़ा हूं। इन तीनों मुद्दों पर लगातार चुनौती देने के बाद भी कोई न समर्थन करता है न विरोध। अधिकांश लोग तो विषय को कठिन मानकर छोड़ देते है। किन्तु जो धूर्त लोग हैं वे इन विषयों को जानबुझकर चर्चा से बाहर रखना चाहते है। धूर्त लोगों में विरोध की शक्ति नहीं है किन्तु अपनों का कर्तव्य है कि इन तीनों मुद्दों पर विचार मंथन के पक्ष विपक्ष में गति प्रदान करें। अभी हमारे विचार दुनिया में अकेले है यह निराशा का कारण मत समझिये। हम आप मिलकर धूर्तो की चुप्पी तोड़ने में अवश्य सफल होंगे। यदि हम गलत होंगे तो अपने विचार संशोधित करेंगे अन्यथा हम अन्य लोगों को अपने विचार बदलने के लिए मजबूर कर देंगे।

(ज) आचार्य पंकज अध्यक्ष लोक स्वराज्य मंच ।

मेरे एक लेख के संबंध में मोहम्तद शफी भाई ने अपने विचार भेजे हैं । इस संबंध में विस्तृत उत्तर की आपने मुझसे अपेक्षा की है। मेरे विचार में मोहम्मद शफी भाई ने बहुत अच्छा किया है क्योंकि इसी तरह विचार मंथन आगे बढ़ेगा। मैं अन्य पाठकों से भी अपेक्षा करता हूं कि वे इस मंथन में भाग लें। इस लेख के साथ मैं मोहम्मद शफी भाई को विशेष संदेश देना चाहता हूं कि हम गांधीवादी है प्रतिकियावादी नहीं। हम न कायर है न ही युद्ध पिपासु । हमारी यही कामना है कि हमारी आपकी सोच समाज को गांधी के इस मार्ग पर आगे बढ़ाने में सहायक हो सके।

इतिहास गवाह है कि शान्तिप्रिय एवं अहिंसावादी हिन्दुओं को मुस्लिम आकमणकारियों तथा शासकों के हाथों अत्याचार अन्याय एवं दमन का शिकार बनना पड़ा।

कितने ही मन्दिर तोड़े गये तथा कितनी ही बहुमूल्य मूर्तियों एवं सामग्री लूट ली गयी। दुनिया का इतिहास आकमणों, परतंत्रता एवं दमन से भरा पड़ा है, किन्तु इन तुर्को एवं मुगलों ने क्योंकि यह सब धर्म के नाम पर धर्म की आड़ पर किया इसलिए जख्म बहुत गहरे लगे और अब तक रिस रहे हैं। मुस्लिम शासन का अन्त हुआ तथा ब्रिटिश काल आया फिर जैसे–जैस आजादी का समय निकट आता गया भारतीय मुसलमानों ने अपने नेताओं के 'दो कौमी जनरिए ' को अपना लिया। जिन्ना ने 'डायरेक्ट एकशन' का नारा दिया, देश में दंगों की आग भड़की। देश का विभाजन हो गया। फिर भी गांधी जी अहिंसा और आपसी भाईचारे पर टिके रहे। उधर पाकिस्तान में भारत से गये मुसलमानों कादियानियों और शियों के साथ अब तक भेदभाव और अत्याचार एवं हिंसा जारी है।

कश्मीरी मुसलमान धीरे–धीरे षड़यंत्र का शिकार बन गये। कट्टरवाद को अपनाकर आतंकवाद एवं अलगॉव के रास्ते पर चल पड़े। हिन्दुओं, सिक्खों पर आक्रमण अत्याचार और कश्मीरी से पलायन हेतु मजबूर किया। यही सब बाते हैं जिनकी वजह से आम हिन्दू विवश हो रहा है कि आम मुसलमानों से घृणा करे। हर तरफ घृणा एवं शक के बादल मंडरा रहे हैं। हम किसी मुस्लिम राष्ट्र में रहना स्वीकार नहीं कर सकते हैं। कौन ऐसा भारतीय मुसलमान है जो चोरी के लिए हाथ कटवाना और पर स्त्री यौन संबंध के लिए पत्थरों की मार से मारे जाने की सजा को आज के युग में न्यायोचित समझेगा । हमारे सामने आधुनिकता, इस्लाम और हिन्दुत्व के स्वस्थ सकारात्मक समन्वय का अवसर है। कहा जाता है कि पैगम्बर ने एक बार कहा था कि वह हिन्द से आती सुगन्ध को महसूस कर रहे हैं। इमाम हुसैन जब कर्बला में दुश्मनों से घिर गये थे तो उन्होंने हमेशा के लिए हिन्द चले जाने की अनुमति मांगी थी। उनकी रक्षा के लिए यहा से दन्त ब्राम्हणों की सेना भी गयी थी जो समय पर पहुंच नहीं सके थें। ऐसा कहा जाता है कि जब से धरती पर हवा आई है वह हिन्द में भाई चारे के लिए प्राणवायु की तरह है।

भारत सिर्फ हम भारतीयों की ही नहीं सारी मानव जाति का देश रहा है । इसीलिए बसुधैव कुटुम्बकम् की मान्यता है। भारत का अध्यात्म अपनी पराकाष्ठा पर रहा है। देवी देवताओं का अर्थ यही रहा है कि ईश्वर पदार्थ के हर रूप तथा ऊर्जा एवं शक्ति के हर रूप में झलकता हैं। ईश्वर को सिर्फ पुरूष , सम्राट एवं पिता के रूप में नहीं बल्कि माता,साम्राज्ञी एवं स्त्री रूप में भी देखा गया है। इस्लाम का निराकार एकेश्वरवाद भी है। कितने ही अवतार,ऋषि पैगम्बर, सूफी, सन्त यहां आये और घूमे फिरे। बाहर से आये मुसलमानों ने धीरे धीरे हिन्दुओं के धर्म एवं अध्यात्म की महत्ता,संस्कृत को सीखा। वेद उपनिषद का अनुवाद किया गया।

ज्यौतिष ,आयुर्वेद, संगीत, कला और नेतृत्व को बढ़ावा दिया गया । त्यौहार और मेले मनाये गये । मुंह बोली हिन्दू बहनों ने मुसलमान भाईयों को राखी बांधी। आपस में विवाह भी हुए। मुसलमानों ने मन्दिर बनवाये, हिन्दुओं ने मस्जिद। लखनऊ में हनुमान –मंदिर नवाब बनवाया और एक पण्डायन की मस्जिद है। जिसे ब्राम्हणों ने बनवाया है।

मुस्लिम काल में ही नानक ने अपना धर्म फैलाया , शिवाजी का कमाण्डर मुसलमान था। नानक का शिष्य मुस्लिम था। जिसके साथ यह मक्का –मदीना गये थे।

अयोध्या के ब्राम्हणों ने जब महाकवि तुलसीदास का विरोध किया तो मुसलमानों ने उन्हें ठिकाना एवं भोजन की व्यवस्था की, जिस समय वह रामचरितमानस की रचना कर रहे थे। कबीर हिन्दू और मुसलमानों के पाखण्डों की आलोचना कर रहे थे, जो शायद आज के जमाने में संभव नहीं । रसखान,कृष्णभक्त थें। मलिक मुहम्मद जायसी पदमावत महाकाव्य में रानी

की महिमा का बखान किया। अमीर खुसरो,रहीम, कबीर, जायसी व रसखान ने हिन्दी भाषण में रचना की। मुसलमानों के मन में राम,कृष्ण व बुद्ध के प्रति श्रद्धा थी। टीवी सीरियल रामायण ,महाभारत और चाणक्य कितने ही लोग श्रद्धा से देखते थे। वारिस अलीशाह ने कहा था '' वही राम है, वही रब है।

इसी हिन्दुस्तानी पृष्ठभूमि में अहिंसा और अपने पन के साथ जो संस्कार विकसित हुआ उसी का पालन अमीर खुसरों, निजामुद्दीन औलिया, सलीमचिश्ती और वारिस अली आदि महान् सूफियों ने किया। यह हिन्दुस्तानी संस्कार मुस्लिम शासन काल में विकसित हुआ। कन्याकुमारी से कश्मीर तक हम सभी को चाहिए कि कट्टरवाद, अलगाववाद और आतंकवाद को इस धरती से बहिष्कृत कर दें। गोधरा स्टेशन पर बेगुनाह मुसाफिरों को जलाकर मार डालना कैसे उचित हो सकता है?

पाकिस्तान के अस्तित्व की बुनियाद भारत की दुश्मनी पर है। भारत से जो मुसलमान गये उनके साथ भेद–भाव किया जाता है। रमजान के समय मस्जिद में नवाज पढ़ रहे शिष्या मुसलमानों को गोलियों से भून डाला गया। मुस्लिम देशों और मुस्लिम शासनकाल में सारा अन्याय सारा अत्याचार और सारी हिंसा धर्म के नाम पर की जाती रही है। मुसलमानों को न कोई अलग देश चाहिए था, न कोई अलग राजनैतिक पार्टी चाहिए थी।

बुद्ध , महावीर और गांधी के देश में हिंसा, अलगाववाद और आतंकवाद का त्याग करके वैदिक (हिन्दू अध्याय) और इस्लामी एकेश्वरवाद का समन्वय करके आधुनिक युग में शान्तिपूर्ण जीवनयापन करना है। यही हिन्दुत्व है यही इस्लाम है। 'दिलों के घाव भरने है, नफरत की आग बुझानी है'। वर्तमान आग को नफरत की आग से बुझाया नहीं जा सकता । राम,सीता,कृष्ण –राधा की धरती बेगुनाहों की लाशों और अबलाओं की चिथड़ों से पाटी नहीं जा सकती। कश्मीर अथवा गुजरात में जिन हिन्दू या मुसलमान बहनों का सुहाग उजड़ गया जिनकी गोद सूनी हो गयी, जो बच्चे अनाथ हो गये, जो घर से बेघर हो गये उन्हें पुनर्वासित करना है। उन्हें सम्मान देना है, उनकी आंखों के आंसू पौंछना है। यही होगा सच्चा हिन्दुत्व और खरा इस्लाम।